UGC APPROVED JOURNAL - 47746
© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 01 | January – March 2018

दलितों और गैर–दलितों की तुलनात्मक वैचारिक दृष्टि

Yogita Rani
Research Scholar of OPJS University, Rajasthan

दलित लेखन के संदर्भ में जिस तरह गैर–दलितों के दृष्टिकोण में असमानता पायी जाती है उसी तरह दलित लेखकों के दृष्टिकोण में भी असमानता पायी जाती है। वैसे हिंदी के दलित लेखकों और आलोचकों में मराठी लेखकों की अपेक्षा मत–वैभिन्नता बहुतद कम है। मराठी में अम्बेडकरवादियों और मार्क्सवादियों के बीच दलित और दलित साहित्य के निर्धारण के प्रश्न पर गहरे मतभेद है। वहां के मार्क्सवादी दलित, दलित और दलित साहित्य के दायरे को विस्तार देना चाहते हैं, जबकि अम्बेडकरवादी उसको दलित समुदाय तक ही सीमित रखना चाहते हैं। वैसे देखा जाए तो दलित साहित्य के संदर्भ में ढेर सारे प्रश्न उठाए गए है, लेकिन इसमें कुछ ही महत्वपूर्ण है। जैसे दलित कौन है ? दलित साहित्य क्या है ? दलित साहित्य के प्रेरणास्त्रोत क्या है, उसका सौन्दर्यशास्त्र क्या है ? दलित साहित्य गैर–दलित लिख सकते हैं कि नहीं। गैर–दलितों ने दलितों के विषय में अब तक जो लिखा है उसका महत्व क्या है ? अनुभूति और स्वानुभूति का प्रश्न आदि। अब पहले प्रश्न को लिया जाए और देखा जाए कि दलित लेखकों का इस विषय में क्या दृष्टिकोण है। अर्थात् दलित कौन है ? इस संदर्भ में डॉ0 श्यौराजसिंह 'बेचैन' का कहना है कि –'मेरे विचार से भारतीय समाज व्यवस्था में जिन्हें जन्म के आधार पर निम्न जाति करार दिया गया है, जिनके साथ बहिष्कार का व्यवहार हुआ है, जो अछूत माने गए है वे सब साहित्य की भाषा में दलित है। दूसरे शब्दों में दलित की सबसे अच्छी एवं सही परिभाषा संविधान में तय की गयी अनुसूचित जातियां एवं जनजातियां, दलित हैं ....।'' दलित कौन है इस संदर्भ में ओमप्रकाश वाल्मीकि का कहना है कि – ''दलित शब्द व्यापक अर्थबोध की अभिव्यंजना करता है। भारतीय समाज व्यवस्था में जिसे अश्पृश्य माना गया वही व्यक्ति दलित है ......।'' इस संदर्भ में डॉ0 धर्मवीर का कहना है कि – ''दलित हिंदू वर्ण व्यवस्था का कुछ नहीं लगता। वर्णव्यवस्था दलित की न मां है, न ताई न चाची, न मौसी और न मामी, न फूफी। वह उसकी दादी या नानी में से कुछ भी नहीं है। दलित के लिए हिंदू वर्ण व्यवस्था अचम्भा हो सकती है .... हां यह कहना किसी भी दलित का मूल अधिकार है कि वह हिंदू वर्ण–व्यवस्था का अंग नहीं है। हिंदू वर्ण व्यवस्था दलित के लिए एक जेल है। दलित वर्ग ब्राह्मण की तरफ से सजायाफ्ता है लेकिन इस संभावना के साथ कि युद्व करके वह इस जेल से भी कभी बाहर हो सकता है। दृष्टि यहां तक फैली हुई होनी चाहिए कि दलित हिंदू वर्ण व्यवस्था से अनजान, बाहर और पृथक है ....।'' कुछ दलित साहित्यकारों और बुद्विजीवियों का मानना है दलित शब्द के अंतर्गत केवल अछूत ही रखे जा सकते हैं आदिवासी नहीं। इस संदर्भ में इन लोगों का मानना है कि आदिवासियों की समस्या अछूतों की समस्या से अलग है, अर्थात् सामाजिक भेदभाव का जितना सामना अछूतों को करना

पड़ता है, उतना आदिवासियों को नहीं। इस तरह की सामाजिक समस्या से वे पूरी तरह मुक्त है। लेकिन उपरोक्त परिभाषाओं से जो बात उभर कर आती है वह यह कि जो समूह वर्णाश्रम व्यवस्था से बाहर है वही दलित है। इस आधार पर देखा जाए तो मात्र अछूत और आदिवासी ही वर्णाश्रम व्यवस्था से बाहर के समूह है। इसलिए इन्हीं को ही दलित की श्रेणी में रखा जाता है। अबर दलित शब्द से इन सामाजिक समूहों का भाव नहीं व्यक्त होता है, तो इसे छोड़ा जा सकता है जैस डॉ0 धर्मवीर कहते हैं –''दलित साहित्य की परिभाषा में दलित के स्वप्न, दलित की कल्पना और दलित के ख्याल को छोड़ा नहीं जा सकता। जरूरत पड़े तो इस दलित शब्द को छोड़ा जा सकता है।'' इसलिए दलित साहित्यकारों के लिए मोटे तौर पर और सर्वाधिक मान्य दलित शब्द अगर किसी सामाजिक समूह का द्योतक है तो वह है, वर्णाश्रम समाज व्यवस्था से बाहर रहने वाले समूह का। अब जो दूसरा महत्वपूर्ण प्रश्न है वह है दलित साहित्य है क्या और उसकी अवधारणा क्या है ? दलित साहित्य की अवधारणा पर एक प्रश्न के उत्तर में ओमप्रकाश बाल्मीकि जी कहते हैं – ''जरूरी इसलिए है कि हिंदी साहित्य में ढूंढने पर भी हमें अपना चेहरा दिखायी नहीं देता, वो साहित्य हमें अपना नहीं लगता। चूंकि वहां अपमान और हीनंताबोध को अलावा कुछ नहीं है। हमारी जिजीविषा, हमारा संघर्ष, हमारे जीवन मूल्य, हमारी मानवीय संवेदनाएं कैसे मान सकता है।

Key word : दलित दृष्टिकोण, गैर–दलित दृष्टिकोण, दोनों दृष्टिकोणों के बीच के सामान्य बिन्दु

दलित दृष्टिकोण

भाषा संपर्क करने की सर्वाधिक लोकप्रिय और सशक्त माध्यम है। भाषा के द्वारा विचारों का आदान प्रदान तो होता ही है। दिन प्रतिदिन के मानव व्यवहार भ संचालित होते है। चूंकि भाषा का संबंध समाज से होता है। इसलिए समाज का प्रभ्झाव भाषा पर पड़ता है। व्यक्ति और वर्ग के रूप में, अमीरी और गरीबी के रूप में, वर्ण और जाति के रू\ में अथवा किसी अन्य रू\ में समाज में जो भिन्नता पायी जाती है उसका प्रभाव भाषा पर पड़ता है। विभिन्न सामाजिक वर्गों से आने वालों पात्रों की भाषाएं, भले ही अपनी लिपि और बोलचाल के स्तर पर समान है। लेकिन अपने बनावट, स्वभाव और प्रभाव के स्तर पर भिन्न रहती है। कहने का आशय यह कि भाषा का भी अपना वर्गीय चरित्र होता है। भारत में भाषा को वर्गीय ही नहीं वर्णीय चरित्र भी होता है। अगर प्राचीन काल में शूद्रों और स्त्री पात्रों को संस्कृत बोलने का अधिकार नहीं था, तो यह भाषा के एक विशेष वर्णीय चरित्र को ही दर्शाता है।

इस अध्याय में भाषा के इसी वर्गीय और वर्णीय चरित्र का अध्ययन किया गया है। चूंकि अध्ययन के लिए चुनी गई कहानियों में वे कहानियां ली गई है। जो दलितों के जीवन पर केन्द्रित है और गैर दलितों द्वारा लिखी गई है। इसलिए उनका एक विशेष संदर्भ बनता है। जिसमें कई स्तरों पर चारित्रिक वैविध्य होने पर भाषा में भी विविधता आ गई है। इसी को ध्यान में रखकर भाषा की विशेषताओं का अध्ययन किया गया है। अगर और स्पष्ट ढंग से कहा जाए तो इन कहानियों में भाषा के स्तर पर यह

UGC APPROVED JOURNAL - 47746
© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 01 | January – March 2018

देखा गया है कि गैर दलित पात्रों की भाषा, दलित पात्रों के प्रति उनके जातीय दुराग्रहों को किस प्रकार प्रकट करती है ? हीनताबोध से उपजी दलित पात्रों की भाषा कैसी है ? शोषण और अन्याय की मानसिकता भाषा में किस तरह आती है ? परिवर्तनवादी दलित और गैर दलित पात्रों की भाषा कैसी है ? कहावतों, मुहावरों, लोकोक्तियों, मिथकों, प्रतीकों आदि की अपनी विशेषताओं में भाषा समाज के वर्णवादी और वर्गवादी चरित्र को किस रूप में ढोती है ? क्षेत्रीय भाषाओं में यह किस रूप में आती है ? आदि का अध्ययन इस अध्याय में किया गया है। हां, इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण बात यह कही जा सकती है कि चूंकि कहानियों में भाषा का प्रयोग उपरोक्त तीन चार रूपों में ही किया गया है। इसलिए इन्हीं रूपों को अध्ययन के लिए चुना गया है। इस स्थिति में भाषा की विशेषताओं को दर्शाने के लिए सभी कहानियों से उद्धरण नहीं लिए गए है। केवल उन्हीं कहानियों से उद्धरण लिए गए है जो आवश्यक जान पड़े है।

कहानियों में पात्रों की भाषाएं चाहे वे दलित पात्र हो या गैर–दलित पात्र उनकी जातीय मानसिकताओं को बखूबी व्यक्त करती है। पात्रों की ये भाषाएं वर्णाश्रम समाज की तमाम परंपरओं को संचालित और निर्देशित करती है। एक प्रकार से ये भाषाएं ही शासन करती है। वर्णाश्रम समाज व्यवस्था को स्वीकार करने वाल पात्र अगर दलित है तो उनकी भाषाएं उनकी दीनता और हीनता को प्रकट करती हुई दिखती है। अगर गैर–दलित पात्र है तो उसकी भाषा उसकी जातीय श्रेष्ठता को बखूबी प्रदर्शित करती है मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'छुटकारा' में एक उच्च जाति की मालिकिन कुछ इस तरह कहती है – ''बायने जाते हैं मेहतारानियों के घर ? वह खुद देहरी पर आकर ले जाएगी, आंचर में डाल देंगे, त्यौहार पावन देने का अपना ढंग होता है ?'' इसमें एक गैर दलित पात्र की जातीय श्रेष्ठता का भाव तो स्पष्ट होता ही है इसके साथ साथ उसमे यह भाव भी छिपा हुआ है कि मेहतर जाति के लोग हीन और नीच होते है। अछूतों के अलावा अन्य किसी के घर बायने पंहुचवाए जा सकते है। पर किसी भी रूप में एक विशेष जाति के लोगों के यहां नही। यह भाषा इतना ही संकेत नहीं करती कि एक विशेष जाति के लोगों को कुछ अन्य जाति के लोगों के समान आदर और प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी, बल्कि इससे भी अधिक इस बात का संकेत करती है कि यह एक सामाजिक नियम है जिसका उल्लंघन करना अनैतिक है, अर्थात् सामाजिक रीतिरिवाजों और मान–मर्यादाओं के विरूद्व है। इसी कहानी का पात्र छन्नो जो जाति से मेहतरानी है उच्च जातियों के मुहल्लों में घर लेकर रहना चाहती है, तो इसकी प्रतिक्रिया कितनी तीव्र होती है – ''होने को तो छन्नो भी इंसान की मूरत है। भगवान की बनायी हुई औरत। पर यह मेहतरानी यहां बस जाती है मानो और इसके नातेदार रिश्तेदार यहां आ जाते है मानो गली के लौंडो का क्या होगा ? मेहतरानियों की नस्ल बड़ी शैतान होती है, क्योंकि मिली जुली होती है। बला का हुस्न क्या ऐसे ही उतरता है ? ऊपर से बेशर्म निगाहें। छन्नों की लौंडिया ही कल से इश्क की कबड्डी खेलेगी। मोहब्बत के खेल और हुस्न के किस्से बराबरी वालों में फबते है। गैर बराबरी का इश्क तो दीन–ए–इलाही अकबर

UGC APPROVED JOURNAL - 47746
© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 04 , Issue : 01 | January – March 2018

भी नहीं झेल पाया था।'' इस पैराग्राफ में एक गैर दलित की भाषा जातीय दुराग्रहों को ढोती तो है ही वह दलितों और अछूतों के प्रति कितनी असंवेदनशील है।

एक अछूत महिला जो उसी मुहल्ले की तमाम गंदगियों को साफ करती है, टट्टी–पेशाब को धोती है, ज बवह उस मुहल्ले में घर लेकर रहना चाहती है तो वही लोग जिनकी वह सफाई करती है, कितने निर्मम हो जाते है उसके प्रति, कितनी अपमानजनक भाषा का प्रयोग करते हैं उसके लिए। जातीय रूप से श्रेष्ठ होने की मानसिकता उनकी भाषा में अत्यंत असंवेदनशील और गैर–जिम्मेदार होकर प्रकट होती हैं। स्त्री और पुरूष के बीच प्रेम का व्यापार एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया ऊंच–नीच, अमीर–गरीब किसी भी स्तर के स्त्री और पुरूष के बीच हो सकती है, और होती ही है। पर किसी उच्च पुरूष का किसी अछूत स्त्री के साथ अथवा किसी अछूत पुरूष का किसी सवर्ण स्त्री के साथ प्रेम और विवाह अनैतिक मान लिया गया है। प्रेम में अनैतिक मान्यताओं का उल्लंघन किसी भी स्थिति में हो सकता है। किंतु यहां भाषा इस बात का संकेत करती है कि छोटी जाति की महिलाएं नैतिक मर्यादाओं का उल्लंघन सबसे अधिक करती है। यह भाषा सहज ही समस्त दलित स्त्रियों के अपमान का बोध कराती है। अर्थात् दलित जाति की स्त्रियों की कोई मर्यादा नहीं होती, उनके आचरण में शालीनता का अभाव होता है, उनका चरित्र अनैतिक होता है आदि। यहां एक गैर दलित की भाषा अपनी अभद्रता, उत्तरदायित्व विहीनता एवं असंवेदनशीलता के रूप में विद्यमान दिखती है। इतना ही नहीं यह भाषा सामाजिक नियमों और मान्यताओं की याद तो दिलाती ही है इसके साथ साथ उसके उल्लंघन की स्थिति में इस पर प्रहार कर इसके पुनः उल्लंघन की संभावनाओं को समाप्त भी करती है। सामान्य रूप से भारतीय समाज का संचालन वर्णाश्रम व्यवस्था के नियमों द्वारा होता है। इसलिए भाषा का प्रयोग भी उसी के अनुरूप होता है। अगर सामान्य रूप से समाज के सभी वर्ग अपने–अपने कर्त्तव्यों, का पालन करते हुए जीवन यापन करते है, तो भाषा ही चाहे वह गैर–दलित की हो या दलित की, अगर जातीय मानसिकता को ढोती भी है तो वह इतनी कटु, अभद्र और अश्लील नहीं होती जैसा कि उपरोक्त उद्धरणों में देखा गया है। पर जहां इसका थोड़ा सा उल्लंघन होता है तो भाषा बदल जाती है। उसी कहानी के इस निम्नलिखित उद्धरण में भी यह बात देखी जा सकती है – ''चलो यहां से। इस भंगिनियां के दरवाजे पर आ गए सो खुद को राजरानी समझ बैठी। तबियत खराब है राजरानी जी की। डॉक्टर को दिखाने जांएगी। ओ हो। फैशन में रेशमी कपड़े पहन लिए तो जात भी ऊंची हो गई, काम से जी चुरा रही है। इस लड़की को पैज है। हमारी बीना जैसी चप्पल पहनती है। वैसी ही ले आई है, देख लो। अब संडास कमाने के लच्छिन दिख रहे हैं इसमें ? मां को लजा दिया रंडी ने।'' यहां बड़े छोटे और सूक्ष्म स्तर पर वर्णाश्रम समाज व्यवस्था के नियमों का उल्लंघन होता है। सूक्ष्म स्तर पर कहने का आशय है कि इससे सवर्ण लोगों के मान–सम्मान पर सीधी कोई चोट नहीं पहुंचती। इसलिए भाषा भी बहुत अश्लील, आक्रामक और असंवेदनशील नहीं है। यहां भाषा अत्यधिक व्यंग्यात्मक हो गई है। एक अछूत के रहन–सहन और व्यवहार

बदलने पर भाषा का वर्णवादी रूप बदल जाता है। वह दूसरी तरह से मार करने लगती है। पर ज्यों ही दलितों और शूद्रों द्वारा सीधे वर्णारम व्यवस्था के नियमों और मूल्यों को उल्लंघन किया जाता है भाषा अत्यंत ही अभद्र, आक्रामक, अपमानजनक और असंवेदनशील हो जाती है एस0 आर0 हरनोत की 'मोची' कहानी में एक पंडित जी अपने नौकर को कुछ इस प्रकार संबोधित करते है – ''हरामी, कुत्ता, वज्जात, दिखता नहीं। फूट गई दोनों। कहां चला आया, मादर .... दों .... को भर पेट रोटी क्या दे दी कि अपनी औकात भूल गये।'' आगे कहते हैं – ''अब साला जुबान भी चलाने लगा। मेरा लाखों का नुकसान कर दिया। बिरादरी में नाक कटवा दी। ऊपर से मेरे ही सिर गलती मढ़ने लगा। मां की खसमों को यों रोटी क्या दे दी, ऊपर चढ़ गए।'' बदरू जाति का अछूत है। अपने मालिक पंडित हरिनंद के यहां नौकर है। बचपन से वह यहीं नौकरी कर रहा है। पूरी निष्ठा और ईमानदारी के साथ। इसी बल प रवह अपने आपको पंडित हरिनंद के घर का सदस्य समझने लगा था। हरिनंद के घर से भी उसको वैसा ही प्यार मिलने लगा था। पर एक दिन शादी के मौके पर वह भूल से रसोई घर में चला गयाह। एक अछूत का रसोई घर में जाना वर्णाश्रम व्यवस्था के नियमों का खिलाफ है। इससे भी अधिक वह वर्णाश्रम धर्म के खिलाफ है। इसी नियम के उल्लंघन पर बदरू को उपरोक्त भाषा को सुनना पड़ा। पंडित हरिनंद की ऐसी भाषा सुनकर उसका हृदय विदीर्ण हो गया और उसका सारा का सारा भ्रम कि वह भी पंडित हरिनंद के परिवार का एक सदस्य है टूट गया। अचानक वह आसमान से जमीन पर आ गया। आज यहां बदरू की सारी निष्ठा, समर्पण, ईमानदारी, प्यार किसी काम का नहीं रहा। ये मानवीय मूल्य वर्णाश्रम व्यवस्था के आगे बौने साबित हो गए।

संदर्भ सूची

1. अकेला, ए.आर. (संपादन एवम् संकलन) : मायावती और मीडिया, आनन्द साहित्य सदन अलीगढ़, उत्तर प्रदेश, प्रथम संस्करण – 1997
2. अकेला, ए.आर. (संपादन और संकलन) : कांशीराम (प्रेस के आइने में) आनन्द साहित्य सदन अलीगढ़, उत्तर प्रदेश, प्रथम संस्करण – 1994
3. अम्बेडकर, डॉ0 बी.आर. : अछूत कौन और कैसे ? बुद्ध भूमि प्रकाशन नागपुर, महाराष्ट्र, प्रथम संस्करण – 1995।
4. अख्तर, मोहम्मद जीमल : आयरन लेडी – मायावती, बहुजन संगठक, 12 गुरुद्वारा रकाबगंज रोड, नई दिल्ली – 09, प्रथम संस्करण – 1999
5. डॉ0 अनिल, नलिनी डॉ0 म. ला. सहारे : डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर की संघर्ष यात्रा एवं संदेश, सेगमेंट बुक्स नई दिल्ली–48, प्रथम संस्करण – 1997
6. आचार्य, नन्द किशोर – संस्कृति का व्याकरण, वाग्देवी प्रकाशन बीकानेर, राजस्थान–01, प्रथम संस्करण–1988

7. आजाद, आचार्य पृथ्वी सिंह – गुरु रविदास, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नई दिल्ली – 16, पहला संस्करण – 1975
8. इन्द्रदेव – भारतीय समाज, आगरा विश्वविद्यालय आगरा, प्रथम संस्करण – 1969
9. कर्दम, जय प्रकाश – करूणा (बौद्ध पृष्ठभूमि पर आधारित उपन्यास) भारत सावित्री प्रकाशन गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश, प्रथम संस्करण – 1986
10. कर्दम, जय प्रकाश – छप्पर, संगीता प्रकाशन शाहदरा, दिल्ली–110032, प्रथम संस्करण–1994
11. कर्दम, जय प्रकाश (सम्पादक) – दलित साहित्य – 1999, 2000, 2001, सम्पर्क – बी955ए डी. डी.ए. फ्लैट्स (एम.आई.जी.), ईस्ट ऑफ लोनी रोड दिल्ली–110093, दूरभाष–2814887
12. कपाड़िया, प्रेम – मिट्टी की सौगंध, इण्डियन सोशल इन्सटीट्यूट प्रकाशन 10 इन्स्टीट्यूशनल एरिया लोधी रोड, नई दिल्ली–03, प्रथम संस्करण–1985
13. कांशीराम – बामसेफ–एक परिचय, आनन्द साहित्य सदन अलीगढ़, उत्तर–प्रदेश, प्रथम संस्करण – 1981
14. कुमार, राजेन्द्र (संपादक) – स्वतन्त्रता की दलित अवधारणा और निराला के विरोधाभास (लेख) अभिप्राय पत्रिका (संयुक्तांक 22–23) संपर्क – 12 बी/1, बंद रोड, एलन गंज, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, 211002
15. गंगानिया, ईश कुमार – हार नहीं मानूंगा (कविता संग्रह) अतिश प्रकाशन हरिनगर, दिल्ली–64, प्रथम संस्करण – 2000
16. ग्रेवाल, ओम प्रकाश – साहित्य और विचारधारा, आधार प्रकाशन पंचकूला, हरियाणा, प्रथम संस्करण–1994
17. गुप्ता, रमणिका (संपादक) – दूसरी दुनिया का यथार्थ, नवलेखन प्रकाशन मेन रोड हजारी बाग बिहार – 825301, प्रथम संस्करण – 1997
18. गुप्ता, रमणिका (संपादक) – दलित चेतना – साहित्य, नव लेखन प्रकाशन हजारी बाग, झारखण्ड–825301, प्रथम संस्करण–1997
19. गुप्ता, रमणिका (संपादक) – युद्धरत आम आदमी, दलित चेतना विशेषांक – 31, (जुलाई–सितम्बर–1995) नव लेखन प्रकाशन, हजारी बाग–825301
20. गुप्ता, रमणिका – मौसी, नीलकण्ठ प्रकाशन महाराली, नई दिल्ली – 30, प्रथम संस्करण –1996